रात्रि को स्वप्न में संत तुकाराम ने उसे दर्शन दिया और 'गीता' देते हुए मंत्र दिया और कहा,'कष्ट-क्लेशों के बाद ही परमार्थ की प्राप्ति होती है।'

लज्जित हो गये विश्वामित्र

महर्षि वशिष्ठ ने काम और क्रोध पर विजय प्राप्त कर ली थी। इसी के संबंध में यह प्रसंग है। एक बार महाराज विश्वामित्र शिकार खेलते-खेलते बहुत थक गये थे। उन्हें विश्राम की आवश्यकता थी। पास ही वसिष्ठ जी का आश्रम था। विश्वामित्र अपने पूरे दल के साथ उनके आश्रम में आ पहुंचे। महर्षि वशिष्ठ ने उनका हार्दिक सत्कार किया।

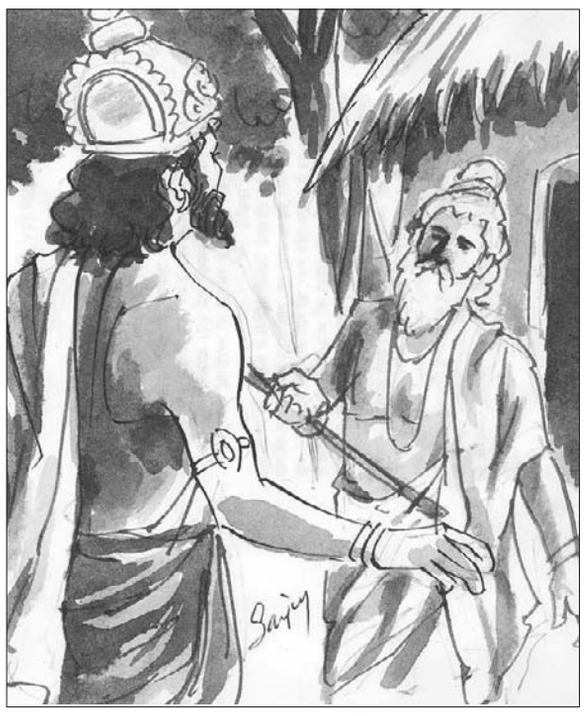

वशिष्ठ जी के पास एक दिव्य गाय थी, नन्दिनी। वह सभी कामनाओं को पूर्ण करने में सक्षम थी। वशिष्ठ जी के इच्छानुसार नन्दिनी ने विश्वामित्र के पूरे दल के लिए यथोचित आतिथ्य-सामग्री जुटा दी। ऐसा आतिथ्य विश्वामित्र और उनके साथ आये सैनिकों ने कभी-नही देखा था।

नन्दिनी की अद्भुत शक्ति देखकर राजर्षि विश्वामित्र के मन में लोभ आ गया। उन्होंने अपना सब कुछ देकर नन्दिनी को लेना चाहा। वशिष्ठ जी ने उनका प्रस्ताव नकराते हुए कहा-राजर्षि! मैं नन्दिनी की सहायता से देवताओं, अतिथियों और पितरों की पूजा करता हूं। इसके बिना यह सब नही हो पायेगा। अत: मेरे लिये नन्दिनी को देना असंभव है।

विश्वामित्र लोभ के वशीभूत हो चुके थे। उन्होंने सैनिकों को आज्ञा दी कि नंदिनी को खोलकर जबरदस्ती ले चलो। यदि यह न चलना चाहे, तो पीट-पीटकर ले चलो। सैनिक नंदिनी को पीटने लगे। वह मार खाती हुई वशिष्ठ जी के सामने आ खड़ी हुई। नंदिनी पर यह अत्याचार देखकर उन्हें बड़ा दुख हुआ। बोले नंदिनी! मैं देख रहा हूं कि तुम्हारी अकारण पिटायी की जा रही है, परंतु मै क्या करूं, क्षमा करना ही मेरा कर्तव्य है।

नंदिनी ने पूछा- क्या आपने मेरा त्याग कर दिया है? इस पर वशिष्ठ जी ने कहा-'नहीं देवी! मैंने तुम्हारा त्याग नहीं किया है। मैं तो चाहता ही हूं कि तुम मेरे ही साथ रहो लकिन मेरा कर्तव्य है क्षमा करना, इसलिए मैं कोई प्रतिकार नहीं कर पा रहा हूं।'

वशिष्ठ जी की मजबूरी को समझकर उसने अहिंसा के माध्यम से विश्वामित्र के सैनिकों को भगाने का निश्चय किया। नंदिनी ने पल भर में अपनी दिव्य शक्ति के बल पर क्लेच्छों, हूणों एवं शकों की विशाल एवं शक्तिशाली सेना प्रकट कर दी। उनकी संख्या इतनी अधिक थी कि विश्वामित्र के एक-एक सैनिकों को नंदिनी के पांच-पांच सैनिकों ने घेर लिया। अपनी सेना के इस तरह पैर उखड़ते देख, विश्वामित्र आपे से बाहर हो गए और निहत्थे वशिष्ठ पर प्रहार करने लगे परन्तु वशिष्ठ जी ने तो क्षमा का हथियार धारण कर रखा था। उन्होंने अपने बचाव के लिए सिर्फ एक बांस की छड़ी आगे कर दी। इस छड़ी ने विश्वामित्र के सभी अस्त्रों को पीछे लौटा दिया। विश्वामित्र निरूत्तर और लज्जित होकर घर लौट आये।

- किशन कुमार अग्रवाल

प्रेरक कथाएं

नियमित उपासना

ऋषि विश्वामित्र तब ब्रह्मर्षि नहीं बने थे। गायत्री जप कर रहे थे। कठोर साधना कर रहे थे। श्रेष्ठ तपस्वी-योगी के भी कुछ संस्कार ऐसे रह जाते हैं जो कहीं न कहीं अवरोध बन जाते हैं। इंद्र ने मेनका को भेजा। ऋषि की तप:स्थली के चारों ओर वसंत छा गया। वे मेनका के सौंदर्य के समक्ष पराजित हो गये। समय बीता। एक बेटी ने जन्म लिया। एक सवेरे थोड़ा जल्दी उठ गये थे। पत्नी मेनका भी साथ उठी। अचानक सूर्योदय देखा। बोले—'अरे! ब्रह्ममुहूर्त आ गया और हमने संध्या भी नहीं की। यह तो हमारा नियम था।' मेनका बोली—'नाथ! आपकी कितनी संध्याएं निकल गयीं, आपको पता है? तीन वर्ष बीत गये। दो वर्ष की तो बेटी हो गयी है।' बोध-प्रबोध हुआ। तुरंत सब छोड़कर पुन: सारा क्रम प्रारंभ किया। जीवात्मा को होश नहीं रहता। कोई न कोई संस्कार, भले ही वह एक ही रह गया हो, अवरोध बन ही जाता है। चित्तशुद्धि, श्रद्धा के संबल एवं नियमित उपासना से उस अवरोध को भी हटाया जा सकता है।

अनंत ऊर्जा

रोम्या रोलां दमे का रोगी था। बहुत दुर्बल काठी थी। उसने शादी भी नहीं की। उसकी बहन उसकी बहुत सेवा करती थी। उसने समस्त प्रतिकूलताओं से तालमेल बिठाते हुए अपने अंदर की रचनात्मकता विकसित की। उसे साहित्य के लिए 1944 में नोबेल पुरस्कार भी मिला। महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद, सभी की जीवनियाँ उसने लिखकर पूर्व को पश्चिम में पहुंचाया। यह सब उसने अपनी शारीरिक तकलीफ के बावजूद किया। वह नहीं भी करता तो कोई कुछ नहीं कहता। उस पर कोई तोहमत भी नहीं लगती। मात्र 'बेचारा' संबोधन उसके लिए होता। उसने किया, क्योंकि उसने स्वयं को विराट के प्रति खोला। जो ऐसा करता है, उसके लिए अनंत ऊर्जा के द्वार खुल जाते हैं।

आदर्श की विजय

द्वितीय विश्वयुद्ध चल रहा था। श्री अरविंद को एहसास हुआ कि अंग्रेजों से घृणा करने के कारण आश्रम के कुछ अंतेवासी मन ही मन हिटलर की विजय की दुआ करने लगे हैं। आपस की चर्चाओं में भी कभी-कभी यह बात आ ही जाती है। श्री अरविंद ने तत्कालीन शीर्ष कार्यकर्ताओं की शाम की एक बैठक में कहा—'जो लोग ऐसा कर रहे हैं, वे असुरता की विजय चाहते हैं। भारतीय मूल्य हमें ऐसा नहीं करने देंगे। ऐसे व्यक्ति, जो हिटलर की विजय इच्छा रखते हैं, आश्रम से चले जाएं। प्रश्न मूल्यों का है। हम परमात्मा की, आदर्शों की विजय चाहते हैं।' यह प्रसंग हम सबके लिए एक संदेश है। हमें मूल्य आधारित जीवन जीना है, यह ध्यान हमेशा रखना है। **- संगीता मिश्र**

महात्मा की वाणी

रघवपुर में एक बार एक महात्माजी आये। पूरे गांव के लोग उनके दर्शन को उमड़ पड़े, परन्तु गोपीराम नहीं गया। महात्मा जी के प्रवचन सुनकर गोपीराम की पत्नी लौटी, तो पति को घर में लेटा पाकर नाराज हो गयी। बोली-'अरे, यहां बैठ कर खटिया तोड़ रहे हो, जरा संतों के दर्शन भी जीवन में उतार लो तो बेड़ा पार हो जाएगा।'

गोपीराम जरा मंदबुद्धि था। उसने पत्नी की 'चार बोल' वाली बात को पकड़ लिया। दूसरे दिन अल सुबह जा पहुंचा, महात्मा जी का प्रवचन सुनने। महात्मा जी अकेले ही थे। बोले-'आ गये क्या?' गोपीराम ने प्रणाम किया, तो बोले-'झुक गये क्या?' गोपीराम बैठा, तो बोले-' बैठ गये क्या?' गोपीराम मूढ़ की भांति कुछ देर बैठा रहा। न उसने कुछ पूछा, न महात्मा जी ने कुछ कहा। वह उठकर चलने लगा, तो महात्मा जी बोले-'चल दिये क्या?'

अब गोपीराम ने महात्मा जी के वही चार वाक्य रट लिये। घर आकर उन्हें हर वक्त दोहराता। उसकी पत्नी नाराज हुई, तो बोला-'तुम्हीं ने तो कहा था कि संतो की वाणी से चार बोल भी ले लो, तो मुक्ति प्राप्त हो जाती है और जीवन के दुख कट जाते हैं। मेरे लिये तो उन्होंने कुल यही चार बोल बोले थे।'

पत्नी मन ही मन पति की मूर्खता पर हंसने लगी, परन्तु वह जानती थी कि इससे मगजमारी करना व्यर्थ है, मानेगा नहीं।

एक रात गोपीराम के घर में दो चोर घुस आये। उस समय पति-पत्नी गहरी नींद में सोये हुए थे। गोपी के कमरे की खिड़की के पास खड़े चोर, चोरी की योजना बना रहे थे कि जाने कैसे गोपी की नींद टूट गयी। वह नींद टूटते ही महात्मा जी के चारों बोल दोहराने लगा।

उसके मुंह से पहला बोल फूटा-'आ गये क्या?'

यह सुनते ही चोरों का दिल धड़क उठा। वे सोचने लगे कि घर के मालिक को शायद कोई शंका हो गई है। कहीं हम नजर न पड़ जायें। यह सोचकर चोर खिड़की के पास नीचे झुक गए।

तभी गोपीराम ने कहा-'झुक गये क्या?'

'बाप रे! लगता है, उसने हमें देख लिया है, अब क्या करें?' एक चोर फुसफुसाया।

दूसरे ने इशारा किया-'जल्दी से इस खिड़की के नीचे बैठ जाओ।' तभी गोपीराम ने तीसरा वाक्य कहा-'बैठ गये क्या?'

तीसरा वचन सुनकर तो जैसे चोरों के प्राण ही निकल गये। वे वहां से सिर पर पैर रख कर भागने लगे।

'चल दिये क्या?' गोपीराम ने चौथा वाक्य कहा।

गोपीराम के मुंह से यह सुनकर चोर भागते हुए बोले-'हे भगवान! यह तो हमारी एक-एक हरकत देख रहा है।' तब तक गोपीराम ने खटपट की आवाज सुन चोरों को भागते देख लिया। उसकी पत्नी भी जाग गयी थी। गोपीराम ने चोरों से कहा-'क्यों भाई, हमारे माल पर हाथ तो साफ नहीं किया ना?' चोर भागते-भागते बोले-' 'नहीं-नहीं, तुम तो पहले ही हमें देख चुके...।

गोपीराम ने पत्नी से कहा-'क्यों, महात्मा जी के चार बोल काम आ गये ना? वरना आज हमारी सारी संपत्ति चोरों की भेंट चढ़ जाती।' गोपीराम की पत्नी मुस्कुराने लगी। **- ललिता गोयल**

ऐसे थे स्वामी असीमानन्द

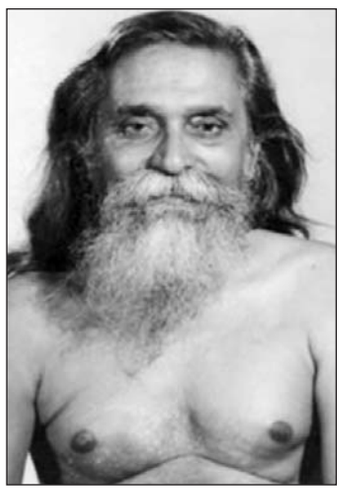

अनादि काल से भारत भूमि पर असंख्य सिद्ध, सन्त, ज्ञानी- ध्यानी महात्मा एवं महामानव अवतीर्ण हुए हैं जिन्होंने दुखी, पीड़ित, शोक संतप्त मानव को एक नयी आलोकित दिशा प्रदान करते हुए हमेशा सत्य की प्राप्ति के लिए प्रेरणा दी तथा बताया कि—

धरा जब जब विकल होती, मुसीबत का समय आता
किसी भी रूप में कोई, महामानव चला आता।

गोस्वामीजी की परम्परा में कई सिद्धसाधक, देशभक्त एवं दार्शनिक प्रकट हुए। देश सेवा में जिस तरह उनके (विजय कृष्ण गोस्वामी) शिष्य विपिन चन्द पाल, आचार्य सतीश चन्द्र मुखर्जी, अश्वनी कुमार दत्त आदि ने कार्य किया, उसी तरह सद्गुरु के रूप में ब्रह्मचारी, कुलानंद जी, श्री जगद्बंधु मैत्र, किरण चन्द दरवेश जी आदि ने कार्य किया। श्री दरवेश जी महाराज के अन्यतम शिष्य स्वामी असीमानन्द सरस्वती (पूर्व नाम अन्नदा कुमार चक्रवर्ती) गृहस्थजीवन के साथ-साथ समाज, देश तथा सम्पूर्ण मानवता के प्रति समर्पित थे। संवेदनशीलता, प्रेम, त्याग, सत्य के प्रति प्रतिबद्धता, निष्ठा, गुरुभक्ति, बलिदान एवं समर्पण का अद्भुत समन्वय उनके जीवन में मिलता है।

पुरुलिया के छोटे से गांव रामचन्द्रपुर में 15 फरवरी, 1904 को शिवरात्रि के दिन अन्नदाकुमार का जन्म हुआ और यह ग्राम ही उनके राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक, धार्मिक तथा जनसेवा का प्रमुख केन्द्र रहा। बचपन से ही उनके अन्दर विभिन्न प्रतिभाओं का स्फुरण देखा गया। 1911 में जार्ज पंचम के भारत आगमन पर उनके अभिनन्दन समारोह के विरोध में अन्नदाकुमार की काव्य प्रतिभा जाग्रत हुई। उनकी रचनाओं से उनका क्रांतिकारी रूप स्पष्ट परिलक्षित होने लगा तथा उन्होंने अंग्रेजी शासन व्यवस्था को समाप्त करने की शपथ ली। स्वाधीनता आन्दोलन के समय वे रामचन्द्रपुर में ही रहकर आश्रम की स्थापना की। 1928 में ऋषि निवारण चन्द्र के सहयोग से रामचन्द्रपुर आश्रम में आयोजित राजनीतिक सम्मेलन में नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने भी भाग लिया। सम्मेलन के बाद अन्नदाकुमार पर पुलिस की दृष्टि पड़ गयी और उन्हें जेल जाना पड़ा। जेल से आने के बाद वे नेताजी के सिद्धांतों को क्रियान्वित करने लगे जिसके चलते उन्हें अंग्रेजों का अमानवीय अत्याचार सहन करना पड़ा। उन्हें घोड़े से बांधकर घसीटा गया, संगीन व जूतों से उनकी छाती को विदीर्ण किया गया तथा चाबुक की मार झेलनी पड़ी। तब स्वामी तथा दरवेशजी द्वारा अप्रत्याशित रूप से उनकी रक्षा की गयी। स्वप्न में प्राय: उन्हें इन दोनों महानुभावों का निर्देश प्राप्त होता था जबकि उस समय वे दीक्षित भी नहीं हुए थे।

एक दिन स्वप्न में गोस्वामी जी ने कहा— धर्म की नींव पर यदि कर्म प्रतिष्ठित न हो, तब न तो अपना उपकार होगा, न ही देश का कल्याण होगा।

सन 1932 में अन्नदाकुमार ने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। सहधर्मिणी शैलबाला देवी एवं अन्नदाकुमार को पहले से ही दरवेशजी का निर्देश एवं मार्गदर्शन स्वप्न में मिलता रहा। 1941 में अन्नदाकुमार दरवेशजी से दीक्षित हुए। प्रथम मुलाकात में दरवेशजी ने उनसे कहा— तुम्हारी तार्किक बुद्धि ने इतने दिनों तक मेरे निकट नहीं आने दी। आज वह मर गयी है। आज से तुम परिपूर्ण रूप से हमारे हो।'

सन् 1943 में पूरे बंगाल में अकाल पड़ा था। उस समय रामचन्द्रपुर श्री श्री विजय कृष्ण आश्रम में अन्नदाकुमार ने विशाल भण्डारा आरंभ किया जो कि उनके गुरुओं की कृपा से पूर्णतया सम्पन्न हुआ। चार माह तक चलने वाले इस भण्डारे में कई अलौकिक घटनाएं हुईं एवं हजारों लोग रोज भोजन करते थे। दरवेशजी के देह त्याग के बाद 1947 में अन्नदाकुमार त्रिवेणी संगम पर दरवेशजी के पूर्व निर्देशानुसार संन्यास ग्रहण किया और उनका नाम स्वामी असीमानंद हुआ।

स्वाधीन भारत के प्रथम चुनाव में वे विधानसभा के सदस्य बने। गुरुदेव के निर्देश से अनासक्त होकर वे इस कार्य में अग्रसर हुए। स्वामीजी का कहना था कि वे जीवन के अंतिम दिनों तक कार्य करते रहेंगे यहां तक कि मृत्यु के उपरान्त भी जगत कल्याण का कार्य करूंगा। उन्होंने आश्रम में विद्यालय, नेत्र चिकित्सालय आरंभ किया जो आज भी चल रहा है। सन् 1957 के बाद वे राजनीति से अलग होकर श्री चैतन्य महाप्रभु प्रणीत नाम प्रचार के उद्देश्य से वृन्दावन, पुरी एवं नवद्वीप की पदयात्राएं कीं। 13 अगस्त 1968 को स्वामीजी ने महासमाधि ली।

—एस. आनन्द

गीतामृतम्

त्रयोदशोऽध्याय:

इच्छा द्वेष: सुखं दु:खं सङ्घातश्चेतना धृति:।
एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम्।।

तथा इच्छा, द्वेष, सुख, दु:ख, स्थूल देह का पिण्ड, चेतना और धृति- इस प्रकार विकारों में, के सहित यह क्षेत्र संक्षेप में कहा गया।।6।।

इस सप्ताह व्रत/त्योहार

28.6.11	भौम प्रदोष व्रत
29.6.11	मास शिवरात्रि व्रत
1.7.11	स्नानदान श्राद्ध की अमावस्या
3.7.11	रथयात्रा, जगन्नाथपुरी यात्रा दर्शन- प्रदक्षिणा, रथोत्सव
4.7.11	वैनायकी श्री गणेश चतुर्थी व्रत

वाक्यामृतम्

- असत्य विजयी भी हो जाये तो उसकी विजय आल्पकालिक होती है। **—लियोनार्ड**
- यदि तुम्हारी तृष्णाएं अनन्त होंगी तो तुम्हारी चिन्ताएं भी अनन्त होंगी। **—टामस फुलर**
- दयालुता सोने की वह जंजीर है जिससे समाज परस्पर बंधा है। **—गेटे**
- दानशीलता हृदय का गुण है, हाथों का नहीं। **—एडीसन**

सद्विचार

मन को कुसंस्कारी न रहने दिया जाय

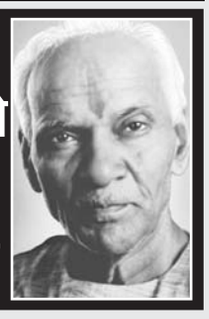

गुरुकुलों के अध्यापक प्राचार्य अपने छात्रों को पढ़ाकर सुयोग्य बना देते हैं। व्यक्तिगत संपर्क में भी ऐसा ही होता है। अरस्तू ने सिकन्दर को पढ़ाकर महान पुरुषार्थी बनाया था। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को, समर्थ ने शिवा को, परमहंस ने विवेकानंद को, विरजानन्द ने दयानंद को, गांधी ने बिनोवा को इस प्रकार का शिष्य बनाया था कि गुरु और शिष्य दोनों ही धन्य हो गये। वासुदेव ने वसुदेव को प्रख्यात कर दिया। जनक की बेटी जानकी ने अपने पिता के गौरव में चार चांद लगा दिये। पिता के नाम से पुत्र भी यशस्वी होते हैं और कई बार पुत्र भी पिता को निहाल कर देते हैं। श्रवण कुमार के कारण उनके माता पिता सर्वत्र जाने जाते हैं भले ही उनका नाम बहुतों को मालूम न हो। हममें से प्रत्येक को एक विद्यार्थी पढ़ाने 'एक शिष्य गढ़ने' एक प्रतिभा बनाने का काम अपने जिम्मे लेना चाहिए।

यों प्रतिभावान व्यक्ति एक साथ कई-कई काम हाथ में लेते और पूरा कर दिखाते हैं। व्यस्त लोग भी कइयों की जिम्मेदारी अपने ऊपर उठा लेते हैं।

हम एक छात्र को, शिष्य या पुत्र को सुयोग्य बनाने का जिम्मा लें। उसे स्वयं पढ़ायें। कितना, किस प्रकार उस पढ़ाई को हृदयंगम किया इसका भी ध्यान रखें।

हम एक ऐसे बालक की जिम्मेदारी अपने कंधों पर उठायें जो अपना सगा है। साथ रहता है और वफादार सेवक तक है।

इस विद्यार्थी का नाम है- आपका अपना मन

-पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

संत का अनादर

महाराष्ट्र की संत बहिनाबाई का विवाह अल्पायु में ही शिवपुर के प्रौढ़ जोशी के साथ हुआ था। वह बड़ा नास्तिक था, जबकि बहिनाबाई धार्मिक प्रवृत्ति की। एक बार विट्ठल- मंदिर में हरिभक्तपरायण जयरामस्वामी का कीर्तन था। बहिनाबाई भी कीर्तन सुनने गयीं। उनके पीछे-पीछे एक बछड़ा भी वहां आ गया और कोने में खड़ा हो गया, मानो वह भी कीर्तन सुन रहा हो। कुछ श्रोताओं ने उसे मारते हुए भगाने की कोशिश की, पर वह हिला तक नहीं। बहिनाबाई ने कहा,'यह बेचारा भगवान नाम का श्रवण कर रहा है, इसे क्यों मारते हो? इसके आने में कीर्तन में कोई व्यवधान तो नहीं आ रहा है।' लोगों ने उसकी बात अनसुनी कर दी और वे बछड़े को बेरहमी से पीटने लगे। इससे बहिनाबाई की आंखों से आंसू बहने लगे। तभी जयराम स्वामी वहां आये। उन्होंने बछड़े पर हाथ फेरते हुए लोगों से कहा,'यह कोई पूर्वजन्म का महात्मा

मालूम होता है, इसे भी कीर्तन सुनने दो।' उन्होंने बहिनाबाई के मस्तक पर हाथ फेरते हुए आशीर्वाद दिया। लोग शांत हो गए और कीर्तन चालू हो गया। दूसरे दिन बहिनाबाई के पति को रात्रि की घटना मालूम हुई, तो उसे यह सुनकर बड़ा गुस्सा आया कि उसकी पत्नी ने अपने मस्तक पर एक पर पुरुष को हाथ फेरने दिया। वह उसे जोर-जोर से पीटने लगा। जब मकान मालिक को बात मालूम हुई, तब कहीं उसे रोका जा सका। तीन दिन बाद उस बछड़े की मृत्यु हो गयी। बहिनाबाई को बड़ा दुख हुआ। वह शोक मनाने लगी। रात्रि को स्वप्न में संत तुकाराम ने उसे दर्शन दिया और 'गीता' देते हुए मंत्र दिया और कहा,'कष्ट-क्लेशों के बाद ही परमार्थ की प्राप्ति होती है।' बहिनाबाई ने इसे तिथि व दिन सहित निम्न श्लोक में स्वीकार किया- **ठेऊनिया करमस्तकी बोला, मंत्र सांगितला कर्णरंध्री। कार्तिकात वद्य पंचमी रविवार, स्वप्नीचा विचार गुरुकृपा।**

बात जब उसके पति को मालूम हुई, तो उसने इसे ढोंग की संज्ञा दी और उसने तुकाराम के प्रति अपशब्द कहे। इतना ही नहीं, उसने पत्नी का त्याग करने की तैयारी भी कर ली। वह ज्योंही सामान बांधकर बाहर जाने लगा, उसके सारे शरीर में असहनीय वेदना होने लगी। वह सोचने लगा, ऐसा क्यों हो रहा है। उसे खयाल आया कि उसने पत्नी को तंग करने के अलावा संत तुकाराम के प्रति अपशब्द भी कहे थे। उसने मन ही मन तुकाराम जी से क्षमा मांगी, तब कहीं वेदना शांत हुई। वह अपनी पत्नी के पास गया। उससे भी क्षमा मांगी और उसे 'गुरू' स्वीकारा। इसके बाद उसका मन ही बदल गया। उसने बहिनाबाई को कभी तंग नहीं किया।

- राजेश कुमार गोयल

वीर पुरुष कभी अपघात नहीं करता

काफी समय पहले की बात है। वाराणसी में एक संत रहते थे। वह संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। उन्होंने सारे धर्म- ग्रंथों की बड़ी गहराई से अध्ययन किया था। दूर-दूर से लोग उनके पास पढ़ने या अपनी शंकाओं का समाधान करने के लिए आते रहते थे। संत का हृदय प्रेम से छलछलाता रहता था। करुणा की धारा बहती रहती थी। जो भी आता था, उसका वह दिल खोलकर स्वागत करते थे और उनकी सहायता करते थे। उनके चेहरे पर हर क्षण मुस्कुराहट खिलती रहती थी। एक दिन एक युवक संत से मिलने आया और वह संस्कृत का विद्वान था। उसके नाम के साथ संस्कृत की बहुत सी उपाधियां जुड़ी थीं। उसके चेहरे से विद्वता का दर्प झलक रहा था तथा वह संत से शास्त्रार्थ करने आया था। उसने संत को सूचना दी ओर शास्त्रार्थ के लिए संत के समक्ष उपस्थित हुआ। शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ। युवक युवक था उसका ज्ञान संत के समान परिपक्व नहीं था। उसने जी- जान से प्रयत्न किया, किन्तु संत के आगे ठहर नहीं सका, पराभूत हो गया। युवक इसके लिए तैयार नहीं था। उसे तो अपने ज्ञान का इतना अभिमान था कि वह अपने को अजेय मान बैठा था। इस पराजय से उसे इतनी चोट लगी कि उसने आत्मघात करने का निश्चय कर लिया। संत को पता चला तो वह आहत हो गये। सोचने लगे कि ऐसी जीत किस काम की, जो दूसरों को प्राण देने के लिए प्रेरित करे? नहीं- नहीं, यह तो जीत नहीं, हार है। संत ने तत्काल युवक को बुलाया और बड़े प्यार से समझाया, 'मनुष्य को अपने प्राणों का हनन करने का अधिकार नहीं है। वीर पुरुष कभी अपघात नहीं करता, यह तो कायरों का काम है। तुम मरो मत, जीओ।' इसके बाद संत ने जो किया, उसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। उन्होंने अपने मुंह पर काष्ठ बांध लिया और सदा के लिए शास्त्रार्थ करने को तिलांजलि दे दी। आगे चलकर वह 'काष्ठ जिह- स्वामी' के नाम से विख्यात हुए।

—प्रदीप कुमार धानक

टूट गया साधना का घमण्ड

पति का अकाल निधन होने पर साध्वी रोहिणी ने कठोर परिश्रम कर अपने एकमात्र पुत्र के प्रखर प्रशिक्षण की व्यवस्था बनायी। उसका पुत्र देव शर्मा अपने समय के श्रेष्ठ विद्वानों में गिना जाने लगा। तपश्चर्या भी वह कर ही रहा था। उसने अपनी मुक्ति, अपना स्वर्ग अधिक प्रिय लगा तो वह माँ और छोटी बहन को बिलखता छोड़कर तीर्थाटन पर निकल गया और नंदीग्राम के एक मठ में और ऊँची साधनाएँ करने लगा। एक दिन नदी तट पर आसन डालकर बैठा था। गीला चीवर सूख रहा था तो देखा कि एक बगुला व एक कौआ चीवर की चोंच में दबाकर उड़ने ही जा रहे हैं। उसने क्रोधपूर्ण दृष्टि से पक्षियों की ओर देखा। साधनाजन्य देह से ज्वाला निकली और दोनों पक्षी जलकर राख हो गये। देव शर्मा को लगा कि समस्त भूमंडल पर उन जैसा दूसरा सिद्ध कोई नहीं। रास्ते में नगर में भिक्षा लेते हुए मठ जाने की बात सोची तो एक गृहस्थ के द्वार पर आवाज लगायी। जवाब से लगा कि गृहस्वामिनी अंदर है। फिर दो-तीन बार पुकार लगायी। धैर्य था नहीं। अंदर से बराबर आवाज आती—'कृपया प्रतीक्षा करें। अभी आती हूँ। साधना कर लूँ। तब भिक्षा दूँगी।' देव शर्मा बोले—'परिहास करती है। जानती है, इसका परिणाम क्या होगा?' अंदर से आवाज आयी—'मैं जानती हूँ, आप शाप देना चाहते हैं, पर मैं कौआ या बगुला तो हूँ नहीं, जो तुम्हारी कोपदृष्टि से जल जाऊँ। जिसने जीवन भर तुम्हें पाला, बड़ा किया, उसे त्यागकर मुक्ति चाहने वाले साधु, तुम मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।' देव शर्मा की सिद्धि का अहं चूर-चूर हो गया। यह तो सब जानती है। भिक्षा देने बाहर आयी गृहस्वामिनी से पूछा—'कौन सी साधना करती हैं? आप मेरे बारे में सब कैसे जान गयीं?' वह बोली—'मैं कर्तव्य की साधना करती हूँ। पति, बच्चे, परिवार, समाज, देश के प्रति कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक पालन करती हूँ। उसी की सिद्धि है यह।' देव शर्मा वापस लौट पड़े अपनी मां के पास कर्तव्यों को पूरा करने हेतु। **- स्मिता मिश्र**

रथयात्रा में राधा, रुक्मिणी क्यों नहीं?

प्रसंगवश

रथयात्रा के दिन, भगवान जगन्नाथ श्री कृष्ण, बलभद्र और अपनी बहन सुभद्रा के साथ रथ पर आरूढ़ होकर नगर परिक्रमा की सदियों पुरानी परंपरा है। आखिर जगन्नाथ के साथ उनकी पत्नी रुक्मिणी या प्रेयसी राधा रथ में क्यों नहीं विराजती...? यह प्रश्न करोड़ों हिन्दू श्रद्धालुओं व भक्तों के मन में जरूर उठता होगा। इसके उत्तर में एक पौराणिक कथा हमें मिलती है, जो इस प्रकार है— एक बार भगवान श्रीकृष्ण द्वारका में अपने भवन में रात को शयन कर रहे थे। पास में उनकी परम प्रिय पटरानी रुक्मिणी भी सो रही थी। निद्रा के दौरान श्री कृष्ण के मुंह से बार- बार राधा का नाम उच्चारित हो रहा था। यह सुनकर रुक्मिणी थोड़ी अचंभित हुई और हताश भी हुई। सुबह उसने यह बात अन्य रानी व पटरानियों को बताकर, उलाहना देती हुई बोली कि 'देखो तो, हमारी इतनी सेवा, प्रेम और समर्पण के बाद भी हमारे स्वामी नींद में भी राधा को याद करना नहीं भूलते...।'

सभी रानियों सहित रुक्मिणी शिकायत लेकर माता रोहिणी के पास गई और उनसे श्रीकृष्ण और राधा के प्रणव प्रसंग व लीलाओं के जानने के लिये प्रार्थना करने लगी, क्योंकि उन्हें पता था कि माता रोहिणी, वृंदावन में राधा- कृष्ण की रास- लीलाओं के बारे में सब कुछ अच्छी तरह से जानती हैं पर रोहिणी माता बताना नहीं चाहती थीं। रानियां थी कि वे मान ही नहीं रही थी वे बहुत ही अनुनय- विनय तथा आग्रह करने लगी कि—'हमे भी तो पता चले, आखिर हमारे स्वामी राधा का इतना गुणगान यों करते है?

आखिर उन लोगों की जिद आगे हथियार डालते हुए माता रोहिणी ने कहा कि जब तक मैं श्रीकृष्ण- राधा के प्रसंग को सुनाऊं... तब तक कोई भी कक्ष में बाहर से न आए, यहां तक श्रीकृष्ण और बलराम को भी इजाजत नहीं हैं...। बहन सुभद्रा द्वार की निगरानी करने लगी। इधर माता रोहिणी ने श्रीकृष्ण राधा के बारे में कहना शुरू किया, उधर वे दोनों भाई किसी काम से माता

रोहिणी के कक्ष की ओर चले आ रहे थे। सुभद्रा ने बहाना करके कक्ष में न जाने का आग्रह किया, फिर भी द्वार पर खड़े होने के कारण उन तीनों भाई बहन को रास लीला के प्रसंग बखूबी सुनाई पड़ रहे थे। वे कृष्ण के प्रति राधा के अद्भुत प्रेम व भक्ति भावना को सुनकर इतने भाव विह्वल और आत्मानुभूति से विभोर हो गये कि उन तीनों का शरीर गलने लगा। श्रीकृष्ण, बलराम और सुभद्रा के हाथ पैर आदि अदृश्य हो गये। ऐसा कहा जाता है कि श्रीकृष्ण का सुदर्शन चक्र भी गल कर लम्बे आकार का हो गया था। उसी दौरान वहां पर देवर्षि नारद जी का पराधना हुआ। वे भगवान श्रीकृष्ण, बलराम और सुभद्रा के अलौकिक स्वरूप के दर्शन करके अभिभूत हो गये। वे अभी संयत भी नहीं हुए थे कि तीनों, नारद को देखकर अपने मूल स्वरूप में आ गये। उन्हें लगा कि शायद नारदजी ने नहीं देखा हो... परन्तु त्रिकालदर्शी नारदमुनि ने तीनों से हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि— 'मैंने अभी- अभी जिस अद्भुत स्वरूप के दर्शन किये है कलियुग में भी भक्तों को भी इसी का दर्शन हो' ...तब भगवान श्रीकृष्ण, बलराम, सुभद्रा ने श्री नारद का आग्रह मानकर, उस दिव्य स्वरूप में दर्शन देना स्वीकार किया। तभी से भगवान जगन्नाथ को श्रीकृष्ण और राधा का दिव्य युगल स्वरूप मानकर उनके साथ भैया बलभद्र और बहन सुभद्रा की अधूरी काष्ठ (लकड़ी) की प्रतिमाओं के साथ रथयात्रा निकालने की परंपरा है। **—अंजु सिंगड़ोदिया (अग्रवाल)**